International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

स्वतन्त्रता पश्चात भारतीय राजनीति में राजनैतिक दलों का विकास

- **Chandra Bhan Singh Sehrawat, Research Scholar, Department of Political Science, Maharaja Agrasen Himalayan Garhwal University, Uttrakhand**
- **Dr. Arti Dwivedi, Assistant Professor, Department of Political Science, Maharaja Agrasen Himalayan Garhwal University, Uttrakhand**

सार–

लोकतन्त्र का उद्भव और विकास होने के पश्चात् राजनीतिक दलों की उत्पत्ति हुई। आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक दलों का बहुत महत्व है। राजनीतिक दल एक ही सिद्धान्त और विचारधारा को मानने वाले लोगों का एक वृहत समुदाय है। इसके माध्यम से सामाजिक हितों की पूर्ति ज्यादा सफलतापूर्वक की जाती है। व्यक्तियों की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक हितों की रक्षा इन्हीं राजनीतिक दलों के द्वारा होती है। राजनीतिक दल किसी सामाजिक व्यवस्था व राजनीतिक व्यवस्था में परस्पर विरोधी हितों के सारणीकरण अनुशासन तथा सामंजस्य के प्रमुख साधन रहे हैं। अतः लोकतन्त्रीय व्यवस्था में राजनीतिक दलों का अध्ययन करना प्रांसगिक और महत्वपूर्ण हो जाता है।

प्रस्तावना–

राजनीतिक दल की अवधारणा का प्रयोग 100 वर्षों से अधिक पुराना नहीं है। 1850 में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में राजनीतिक दलों का वर्तमान स्वरूप उपलब्ध था। अन्य देशों में इस रूप में राजनीतिक दलों की चर्चा नहीं की जाती है। राजनीतिक पार्टी ऐसा संगठन होता है जिसके सदस्यों के दृष्टिकोण तथा उनके उद्देश्यों में समानता पायी जाती है और सभी एक सिद्धान्त तथा विचारधारा के समर्थक होते है, एवं उससे सहमत होते है। इस रूप में यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक दल वे साधन होते है जिनके माध्यम से मानवीय एकता, सामाजिक एकता स्थापित की जाती है। राजनीतिक दल सरकार बनाने व सत्ता प्राप्ति की होड में लगे रहते है। यदि सरकार नहीं बना पाते तो सरकार से बाहर रह कर जनता की बात को सरकार तक पहुंचाते रहते है तथा जनता को अपने राजनीतिक दल के सिद्धान्तों के पक्ष में लाने का प्रयास करते है, चूँकि लोकतन्त्र में बहुमत का होना आवश्यक होता है। अतः सभी राजनीतिक दल अधिक से अधिक मात्रा में अपने पक्ष में या समर्थन में लाने हेतु अपनी पार्टी विशेष के सिद्धान्तों का प्रचार–प्रसार करते है।

राजनीतिक दलों का उद्भव

समाज के अन्तर्गत दलीय संगठन के बीज पुराने समय से ही उपस्थित थे। राज्य क्लब संस्थाएं, समुदाय या ऐसी अनेक सामाजिक व राजनीतिक संस्थायें दलीय संगठन के रूप में रहे है। भले ही इस प्रकार के संगठनों का सरकार से मतलब न हो, लेकिन वे राज्य विषयक अनेक बातों के सम्बन्ध में लोकमत की अंभिव्यक्ति करते थे। राजनीतिक दल जनतन्त्र से कहीं अधिक प्राचीन है।

व्यक्तियों का मनौवैज्ञानिक दृष्टिकोण राजनीतिक दलों की उत्पत्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यथार्थ में राजनीतिक पार्टियों का उदभव मानव के आचार–व्यवहार में शामिल प्रकृतियों और उसमें पैदा विचार वैभिन्यता से हुई मानी जाती है। कुछ लोग स्वभाव से ही

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

रूढ़िवादी होते और वे वस्तु स्थिति में कोई बदलाव व सुधार नही चाहते। दूसरे लोग स्वभाविक तौर पर प्रगतिवादी होते है। अतः वे नवीनता, परिवर्तन और सुधार के पक्षधर होते है।

अर्थिक विषमता को भी दलीय–व्यवस्था की उत्पत्ति का एक कारण कहा जा सकता है। आर्थिक विषमता के कारण पृथक–पृथक आर्थिक हितों के लिए अलग–अलग संगठन या समुदायों का निर्माण स्वभाविक प्रक्रिया के रूप में होता है। मजदूर दल व पूंजीवादी दल इसके परिणाम कहे जा सकते है। वर्तमान में अर्थिक पहलू पर आधारित दल व्यवस्था का महत्व बढा है क्योंकि राज्य का स्वरूप राजनीतिक न होकर आर्थिक भी है। अतः आज हमें लोकतन्त्रीय सरकार के साथ–साथ पूंजीवादी, साम्यवादी सरकार की जानकारी प्राप्त होती ह।

राजनीतिक दलों की उत्पति हेतु विभिन्न धार्मिक तथा साम्प्रदायिक कारकों की भूमिका भी कम महत्वपूर्ण नहीं कहीं जा सकती है। अपने–अपने धर्म तथा साम्प्रदायिक सद्भावों में विश्वास के लिए भी लोग संगठन व दलों का निर्माण करते है। इन दलों व संगठनों के द्वारा लोगों की धार्मिक अस्मिता की रक्षा में सहायता मिलती है। आज प्रायः सभी दल अपने को धर्मनिरपेक्षतावादी मानते है, फिर भी वोट की राजनीति के लिए धर्म को कहीं न कहीं आधार रूप में स्वीकार करते है। भारत में धर्म साम्प्रदायिकता का प्रभाव राजनीति के क्षेत्रों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। सभी राजनीतिक दलों के क्रियाकलापों में साम्प्रदायिकता तथा धर्म हावी रहता है। कुछ राजनीतिक दल तो धार्मिक व साम्प्रदायिक भावनाओं के आधार पर ही काम करते है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी, मुसलिम लीग, अकाली दल, शिव सेना आदि ऐसे राजनीतिक दल है जो लोगों की धार्मिक भावनाओं के विश्वास पर आधारित है।

भारत में राजनीतिक दलों की विकसित पम्परा नहीं है, जिस तरह की ब्रिटेन तथा अमेरिका में है। फिर भी, ब्रिटिश शासन काल के प्रारम्भिक दिनों में ही कुछ दलों की बुनियाद देखने को मिलती है। सार्वजनिक संगठन के रूप में पूना की सार्वजनिक सभा, मद्रास की महाजन सभा तथा कलकत्ते का भारतीय समुदाय सबसे प्राचनी संगठनों में है। राजनीतिक दलों का विकास वस्तुतः सन् 1885 में कांग्रेस की स्थापना से शुरू होता है। जिसका उद्देश्य भारतीयों को गैरसरकारी संसद के रूप में कार्य करना था। शुरू में इसे ब्रिटिश शासकों का समर्थन प्राप्त था, लेकिन थोड़े दिनों बाद ही कांग्रेस द्वारा साम्राज्यवाद की आलोचना तथा स्वराज्य की मांग ने ब्रिटिश शासकों के रूख को बदल दिया। उन्होनें यह महसूस किया कि यह संस्था ब्रिटिश नौकरशाही तथा साम्राज्य को समाप्त कर देना चाहती हैं। अतः उन्होने इस संस्था के विरूद्ध भारतीय जनता को दूसरी संस्था की स्थापना को प्रोत्साहन देना उचित समझा। सर सैयद अहमद खां के नेतृत्व में मुसिलम समुदाय की एक राजनीतिक संस्था को 1906 ई0 में जन्म दिया गया जिसे अखिल भारतीय मुस्लिम लीग कहा गया। मुस्लिम लीग को एक राजनैतिक दल कहना गलत होगा। क्योंकि वह एक साम्प्रदायिक संस्था थी जिसकी सदस्यता केवल मुसलमानों तक ही सीमित थी। इसका उद्देश्य भारतीय मुसलमानों में ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति राजभक्ति पैदा करना तथा राजनैतिक अधिकारों एवं हितों की रक्षा करना था। बाद में कांग्रेस की भांति इस दल ने भी देश की स्वतन्त्रता का नारा लगाया। लेकिन साथ ही साथ इसने देश विभाजन कर मुसलमानों के लिए एक अलग राष्ट्र की मांग की। सन्

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

1937 में मुस्लिम लीग के नेता जिन्ना ने कहा था कि ''मुस्लिम लीग का उद्देश्य पूर्ण प्रजातान्त्रिक स्वायत्त सरकार की प्राप्ति है।'' लेकिन द्विराष्ट्र सिद्धान्त के प्रतिपादन तथा कांग्रेस के प्रति लगातार विरोध के दृष्टिगत से इसे सन् 1941 में अपने संविधान में परिवर्तन लाने के लिए मजबूर किया। उसी वर्ष का विख्यात ''पाकिस्तान प्रस्ताव'' अन्ततः पाकिस्तान के निर्माण के लिये उत्तरदायी सिद्ध हुआ।

मुस्लिम लीग की स्थापना की प्रक्रिया के फलस्वरूप सन् 1916 ई० में हिन्दुओं की एक साम्प्रदायिक संस्था का जन्म हुआ जिसे हिन्दु महासभा के नाम से जाना गया। इस दल का उद्देश्य ''पूर्ण स्वराज्य'' की प्राप्ति था जिसे हिन्दू राष्ट्र की स्थापना करना था। यह कांग्रेस की अहिंसा की नीति के विरूद्ध था। इसके अध्यक्ष सावरकर के शब्दों में ''हिन्दू महासभा और हिन्दू राष्ट्र के गौरव में वृद्धि और पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति है।''

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में दो वैचारिक समूह उद्भूत हुए–उदारवादी और उग्रवादी। दोनों समुदायों में स्वतन्त्रता प्राप्ति की योजना एवं क्रिया पद्धति के प्रति विभेद था। उदारवादी संवैधानिक तरीकों से तथा उग्रवादी सक्रिय कार्यक्रम के द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति करना चाहते थे। सन् 1907 की सूरत कांग्रेस में दोनों गुट पृथक हो गये। पुनः लखनऊ में सन् 1916 में दोनों सम्मिलित हुये। इन दोनों गुटों को राजनीतिक दल नहीं कहा जा सकता था। क्योंकि सामाजिक परिवर्तन की दिशा में स्पष्ट राजनीतिक कार्य योजना दोनों में से किसी के समीप नहीं थी और न ही वे इस उद्देश्य से पूर्ण राजनीतिक शक्ति की प्राप्ति में सक्रिय ही थे। सन् 1920 ई0 में एक नये दल–उदार दल की स्थापना हुई। गाँधी जी के नेतृत्व तथा कांग्रेस के प्रतिक्रिया स्वरूप सुरेन्द्रनाथ बनर्जी के नेतृत्व में कांग्रेस के एक गुट ने इस दल की स्थापना की। इस गुट का उद्देश्य संवैधानिक पद्धति के माध्यम से लक्ष्य की प्राप्ति करना था इसने निर्वाचन में भाग लिया तथा विधानमण्डल और मन्त्रिमण्डल में पद ग्रहण भी किया यद्यपि यह दल लगभग अन्त तक कायम भी रहा लेकिन इसकी स्थिति महत्वहीन ही बनी रही।

इस शताब्दी के प्रथम तीन दशकों तक कांग्रेस, उदार वादी, मुस्लिम लीग तथा हिन्दू महासभा प्रमुख दल बने रहे। इस बीच में अनेकों छोटे साम्प्रदायिक, वर्गीय तथा स्थानीय दलों का भी उदय हुआ। इसमें मुस्लिम कांफ्रेस, मद्रास की जस्टिस पार्टी, बंगाल की कृषक प्रजा पार्टी, उत्तर प्रदेश की राष्ट्रीय कृषक पार्टी, पंजाब की यूनियन पार्टी, बम्बई में डमोक्रेटिक स्वराज्य पार्टी आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन दलों का अस्तित्व नगण्य था।

सन् 1920 के उपरान्त कई वामपंथी दलों का भी जन्म हुआ जिनमें कुछ दल आज भी कायम हैं। साम्यवादी दल की स्थापना सन् 1924 ई0 में हुई एवं सन् 1943 तक यह दल एक गैर कानूनी संस्था के रूप में बना रहा। द्वितीय महायुद्ध के समय सोवियत रूस की नीति के समर्थन के कारण ब्रिटिश सरकार ने इसके ऊपर से प्रतिबन्ध उठा लिया। दूसरा वामपंथी दल समाजवादी दल है जिसकी स्थापना सन् 1934 में हुई। सन् 1948 तक यह कांग्रेस की एक शाखा के रूप में ही कार्य करता रहा। इसके बाद कांग्रेस से अलग होकर एक स्वतन्त्र दल के रूप में कार्य करना शुरू किया।

सन् 1937 के बाद अन्य कई दलों का जन्म हुआ जिनमें रिपब्लिकन सोशलिस्ट पार्टी, फारवर्ड ब्लॉक वकर्स पार्टी प्रमुख थे। बंगाल की टेरेरिस्ट पार्टी सन् 1936 के बाद कांग्रेस में विलीन हो गयी। इस प्रकार स्वतन्त्रता प्राप्ति के पहले भारत में अनेक राजनीतिक दलों का

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

उदय हुआ लेकिन सिर्फ वे ही दल जीवित रह सके जो कुछ सिद्धान्तों तथा स्पष्ट नीतियों पर आधारित थे।

स्वतन्त्रत भारत में राजनीतिक दलों का विकास

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय देश में राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत दो ही दल थे–भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जिसका संगठन और विस्तार व्यापक तथा सम्यवादी दल जो कि एक सीमित स्तर पर कार्य कर रहा था। कांग्रेस ने राष्ट्रीय पुनर्जागरण और स्वाधीनता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। इसके लिये गांधी, नहेरू, पटेल, राजेन्द्र प्रसाद जैसे नेताओं के लिये राष्ट्र भर में सम्मोहन और सम्मान था।दक्षिण में द्रविण मुनेत्रकड़गम तथा उत्तर में हिन्दू महासभा जैसे दल उभर रहे थे। आजादी के बाद राजनीतिक दलों का जो विकास आरम्भ हुआ उसमें 'राम राज्य परिषद' सबसे पहले उभरी। इस पुरातन पोषक हिन्दू धर्म के समर्थक दल की स्थापना सन् 1948 में हुई। सन् 1949 में 'द्रविड़ मुनेत्रकड़गम' का उदय हुआ जो द्रविड़ मुनेत्र कड़गम से पृथक हुए कुछ व्यक्तियों द्वारा गठित किया गया था। सन् 1950 में श्री जय प्रकाश नारायण ने भारतीय 'समाजवादी दल' की और कुछ समय वाद आचार्य कृपलानी ने 'किसान मजदूर प्रजापार्टी' की स्थापना की सन् 1951 में डा0 श्यामा प्रसाद मुकर्जी के नेतृत्व में भारतीय जनसंघ की स्थापना हुई दलों का विकास बडी तेजी से हुआ। सन् 1952 के आम चुनावों में 14 दलों ने राष्ट्रीय स्तर पर ओर 51 दलों ने राज्य स्तर पर भाग लिया।

सन् 1962 और 1967 के बीच राजनीतिक दलों की संख्या उतरोत्तर बढती गई। कुछ दलों में विलयन तथा कुछ के नये जन्म के कारण दल व्यवस्था का रूप बहुत कुछ बदल गया। सन् 1952 में ही 'समाजवादी दल' तथा 'किसान मजूदर प्रजा पार्टी' के विलय के फलस्वरूप 'प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का जन्म हुआ देश के इतिहास में दो दलों के विलय की यह पहली घटना थी। सन् 1959 में श्री राजगोपालाचारी की प्ररेणा से स्वतन्त्र पार्टी ने जन्म लिया जिसने कुछ ही वर्षों में एक प्रमुख विरोधी दल के रूप में ख्याति प्राप्त कर ली। जिन दलों ने सन् 1967 के आम चुनावो में भाग लिया उनको मोटे तौर पर चार वर्गों में रखा जा सकता है।

पहला वर्ग, उन राजनीतिक दलों का था जिनकी संविधान में निर्दिष्ट लोकतन्त्रीय धर्म–निरपेक्ष राज्य की कल्पना में निष्ठा थी। इन दलों में मुख्य थे–कांग्रेस, प्रजा समाजवादी, संयुक्त समाजवादी, स्वतन्त्र, जनसंघ और कुछ राज्य स्तर के दल जैसे बंगला कांग्रेस, जन–कांग्रेस, जन क्रान्ति दल आदि।

दूसरा वर्ग, इसमें वे दल थे जिनकी निष्ठा प्रचलित संसदीय लोकतन्त्र के आदर्शों में नही थी अपितु रूसी अथवा चीनी नमूने के लोकतन्त्र की स्थापना में थी। ये दल थे साम्यवादी (दक्षिण), साम्यवादी (वाम), और विभिन्न मार्क्सवादी वामपंथी दल जैसे क्रान्तिकारी समाजवादी दल, किसान मजदूर दल, मार्क्सवादी फारवर्डब्लॉक, रिपब्लिकन पार्टी, क्रान्तिकारी समाजवादी दल, बोल्शेविक दल आदि। तीसरा वर्ग, इसमें वे दल थे जो अखिल भारतीय स्तर पर संवैधानिक प्रश्नों की और उदासीन थे और प्रान्तीय तथा साम्प्रदायिक समस्याओं को अधिक महत्व देते थे। जैसे अकाली दल, झारखण्ड दल, द्रविड़ मनेत्र कड़गम, सर्वदलीय पर्वतीय नेता सम्मेलन, केरल कांग्रेस, महा गुजरात, जनता परिषद आदि।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

चौथे वर्ग, में वे दल थे जो लोकतन्त्रवाद तथा धर्मनिरपेक्षता को पूरे तौर पर स्वीकार न करके सम्प्रदायवाद को प्रधनता देते थे जैसे–हिन्दू महासभा, रामराज्य परिषद, मुस्लिम लीग आदि। सन् 1967 के चुनावों के बाद उपरोक्त में से अधिकांश अपनी घिसी–पिटी विचारधाराओं और अनाकर्षक कार्यक्रमों के साथ चलते रहे जबकि कुछ दलों का विभाजन हो गया और कुछ दल राजनीतिक रंगमच से विलय आदि के कारण हट गये। स्वाधीन भारत के राजनीतिक रंगमच पर सबसे महत्वपूर्ण और क्रान्तिकारी घटना सन्

1969 में कांग्रेस का दो भागें में विभाजन था। नई कांग्रेस श्रीमती गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस एवं संगठन कांग्रेस (जिसे पुरानी कांग्रेस कहा जाता था ओर जिसका नेतृत्व निजलिंगप्पा, कामराज, मोरारजी देसाई आदि के हाथों में था।) सन् 1971 के मध्यावधि लोक सभायी चुनावों में नई कांग्रेस ने लोकसभा की 518 में से 350 सीटें जीती जबकि संगठन कांग्रेस को 16 स्थान ही मिल सके। सन् 1972 में राज्यों के जो विधानसभायी चुनाव हुए उनमें भी नई कांग्रेस ने प्रभावी विजय अर्जित की। समाजवादी खेमे में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन आये। सन् 1972 मे ंसोशलिस्ट पार्टी व प्रजा सोशलिस्ट पार्टी पुनः मिल गयी, फलस्वरूप सोशलिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया के नाम से एक नया दल अस्तित्व में आया। कुछ ही समय बाद इसमें फूट पड़ गयी और श्री राजनारायण और उनके समर्थकों ने 31 दिसम्बर 1972 को लखनऊ में पुरानी संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी' को पुर्नजीवित किया तथा एस0एन0 मण्डल इसके अध्यक्ष बने और 'जनसंघ' भी खण्डित होने से बच न सका। जनसंघ से निष्कासित होने के बाद वरिष्ठ नेता बलराज मधोक ने अप्रैल 1973 में 'राष्ट्रीय लोकतान्त्रिक मोर्चा' नामक एक नये दल का निर्माण किया। कांग्रेस विभाजन के बाद राजनीतिक दलों के इतिहास में कदाचित सबसे महत्वपूर्ण घटना अगस्त 1974 में 'भारतीय लोकदल' का उदय था जिसमें भारतीय क्रान्ति दल के अलावा स्वतन्त्र पार्टी (पीलू मोदी गुट), उत्कल कांग्रेस (बीजू पटनायक), किसान मजदूर पार्टी (चांदराम), संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी (रामनारायण) और पंजाब खेती बाड़ी जमीदारी यूनियन (बाबा महेन्द्र सिंह) जैसे दल अपने पुराने अस्तित्व को खत्म करके मिल गये।

26 जून, 1975 के बाद लगभग 19 महीने की राष्ट्रीय आपात स्थिति के दौरान लोकतान्त्रिक व्यवस्थाएं धवस्त हो गयी। अधिकांश राजनीतिक दलों के नेता और सक्रिय कार्यकर्ता बंदी बना लिये गये। फलस्वरूप कांग्रेस ने लगभग एक दलीय निरंकुश व्यवस्था स्थापित कर ली। 18 जनवरी 1977 को श्रीमती इंदिरा गाँधी ने अक्समात ही मार्च 1977 में छठी लोकसभा का चुनाव कराने की घोषणा की। श्रीमति इंदिरा गाँधी को विश्वास था कि सत्ता कांग्रेस देश पर इतना छा चुकी है और जनता का मनोबल इतना गिर चुका है कि वह कांग्रेस के अतिरिक्त किसी अन्य दल को स्वीकार करने का साहस नहीं कर पायेगी। देश का राजनीतिक वातावरण तेजी से पलटता गया। मार्च में चुनाव करवाने की घोषणा के दूसरे ही दिन चार गैर–साम्यवादी विरोधी दलों (संगठन कांग्रेस, जनसंघ, भारतीय लोकदल और सामाजवादी दल) ने जनता पार्टी के नाम से अपना एक संयुक्त संगठन स्थापित करने की घोषणा कर दी और इस नये संगठन में विद्रोही कांग्रेसी भी तेजी से शामिल होने लगे। श्री मोरारजी देसाई को जनता पार्टी का अध्यक्ष बनाया गया। 2 फरवरी, सन् 1977 को भारतीय राजनीति में एक मोड़ आया। जब श्री जगजीवन राम ने केन्द्रीय मंत्री मण्डल और कांग्रेस से त्यागपत्र देकर 'लोकतान्त्रिक कांग्रेस' के गठन की घोषणा की लोकतान्त्रिय कांग्रेस ने जनता

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

पार्टी के साथ मिलकर चुनाव लड़ने का निश्चय किया। मार्च सन् 1977 के चुनावों में मतदाताओं ने सत्ता कांग्रेस को पराजित किया और जनता पार्टी को सत्तारूढ होने का अवसर दिया मई के प्रथम सप्ताह तक पांच दलों ने जनता दल में अपना विधिवत विलय कर लिया और चुनाव आयोग ने भी एक राष्ट्रीय दल के रूप में उसे मान्यता प्रदान कर दी। उल्लेखनीय है कि मार्च 1977 के चुनावों से पूर्व भारत सरकार चुनाव 1977' नामक जो सन्दर्भ पुस्तिका प्रकाशित की गई थी उसमें सात राष्ट्रीय और 17 राज्यीय दलों के नाम निबद्ध थे। गैर मान्यता प्राप्त पंजीकृत राजनीतिक दल 39 थे। जिन राष्ट्रीय दलों के नाम गिनाये गये थे, वे थे–1, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, 2. सोशलिस्ट पार्टी, 3. भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) एवं 4. भारतीय लोकदल।

मोरारजी देसाई के नेतृत्व में बनी जनता पार्टी की सरकार केवल 28 महीनों तक ही चल सकी। जनता पार्टी जुलाई 1979 के विभाजन का शिकार बन गई, श्री राजनारायण की अध्यक्षता में जनता (सेक्यूलर) नामक नये दल का गठन हुआ और 15 जुलाई को जनता पार्टी की सरकार का पतन हो गया। इसके बाद किसी भी राजनैतिक दल का स्वरूप 'अखिल भारतीय स्तर' का नहीं रहा। 26 सितम्बर 1979 को 'जनता (एस०)' अर्थात 'सेक्यूलर सोशलिस्ट पार्टी' तथा उडीसा की जनता पार्टी को मिलाकर नई दिल्ली में एक नई पार्टी 'लोकदल' के गठन की घोषणा की गई। प्रधानमंत्री श्री चरण सिंह 'लोकदल' के प्रथम अध्यक्ष और जनता (एस) के अध्यक्ष श्री राजनारायण सर्वसम्मति से उसके कार्यकारी अध्यक्ष चुने गये।

स्पष्ट है कि दलीय व्यवस्था की दृष्टि से स्वतन्त्र भारत का इतिहास पांच भागों में विभाजनीय है। (अ) सन् 1967 के चुनाव से पहले तक केन्द्र और राज्यों में कांग्रेस ही एकाधिकारी स्वामी थी। (ब) सन् 1967 के चुनावों में कांग्रेस की इस एकाधिकारी शक्ति का राज्यों में गहरा आघात पहुंचा और केन्द्र में भी इसकी स्थिति दुर्बल हो गई, (स) मार्च 1971 के लोकसभायी चुनावों में केन्द्र में पुनः प्रचण्ड रूप से एकाधिकारी स्थिति प्राप्त कर ली और सन् 1972 के आम चुनावों में राज्यों में भी पुनः उसकी प्रधानता स्थापित हो गयी। (द) मार्च 1977 के आम चुनावों के बाद कांग्रेस का प्रभुत्व समाप्त हो गया, जनता पार्टी ने भारी बहुमत से अपनी सरकार बनाई और स्वतन्त्र भारत के इतिहास में पहली बार कांग्रेस को विपक्ष में बैठना पड़ा, जनता पार्टी 16 जुलाई 1979 तक ही केन्द्र में सत्तारूढ़ रह सकी, एवं जुलाई 1979 में जनता पार्टी के विभाजन के साथ ही एक दलीय प्रभुत्व वाली बहुदलीय व्यवस्था समाप्त हो गयी। वास्तव में केवल बहुदलीय व्यवस्था जैसी स्थिति रह गई जिसमें कोई भी एक दल ऐसा नहीं रहा जिसकी 'अखिल भारतीय तस्वीर' हो। इस सन्दर्भ में रजनी कोठारी ने अपने विश्लेष्ण में गत पचास वर्षों में दलीय पद्धति को 'एक दलीय प्रभुत्व के युग' तथा 'बहुदलीय व्यवस्था' के रूप में व्याख्यापित किया है।

मार्च 1977 में जनता पार्टी के सत्तारूढ होने के बाद कांग्रेस से यह आशा की गई कि एक सुदृढ़ विपक्ष का स्थान ग्रहण कर लेगी लेकिन कांग्रेस में आन्तरिक फूट का जबर्दस्त दौर चला और 2 जनवरी 1978 को श्रीमती इंदिरा गाँधी ने अपना एक नया दल स्थापित कर लिया। इस प्रकार दो कांग्रेस अस्तित्व में आ गयी–ब्रह्मानन्द रेडडी के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय कांग्रेस और श्रीमती इंदिरा गाँधी के नेतृत्व वाली नई कांग्रेस। इंदिरा गाँधी कांग्रेस ने तेजी से लोकप्रियता ग्रहण की और सन् 1978 के प्रथम चरण में जो राज्य विधान सभाओं के चुनाव

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

हुए उसमें अच्छी सफलता प्राप्त की। कुछ उपचुनावों में भी इंदिरा कांग्रेस ने विजय प्राप्त की। 8 नवम्बर 1978 को चिकमंगूल उपचुनाव जीत कर श्रीमती इंदिरा गाँधी पुनः लोकसभा में आ गई, किन्तु दिसम्बर 1978 में उन्हें लोकसभा की सदस्यता से निष्कासित कर दिया गया इससे इंदिरा कांग्रेस की लोकप्रियता को कोई आघात नहीं पहुंचा ही उसकी प्रगति धीमी अवश्य पड़ गयी। जनवरी 1980 में होने वाले मध्यावधि चुनावों के पूर्व इस बारे में अनुमान लगाना कठिन था कि नवगठित लोकदल, जनता पार्टी और इंदिरा कांग्रेस में से कौन सा दल किस सीमा तक सफलता प्राप्त कर सकेगा। तथापि राजनीतिक क्षेत्रों में यह आशंका अवश्य व्यक्त की जा रही थी कि इंदिरा कांग्रेस की स्थिति पूर्वापेक्षा अधिक दृढ़ हो सकेगी और चुनावों के बाद यह आशंका सही सिद्ध हुई। इंदिरा कांग्रेस ने चुनावों में पूर्ण बहुमत प्राप्त किया और श्रीमती गांधी प्रधानमंत्री चुनी गयी। सन् 1984 में इंदिरा गांधी की मृत्यु से कांग्रेस तथा देश को आघात लगा। श्रीमती गांधी की आकस्मिक मृत्यु के बाद उनके बडे पुत्र राजीव गांधी को कार्यवाहक प्रधानमंत्री बनाया गया। दिसम्बर 1984 में चुनाव हुए जिसमें राजीव गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस को बडी सफलता मिली तथा राजीव गांधी प्रधानमंत्री निर्वाचित हुए। सन् 1989 के चुनावों से पूर्व बोफार्स तोप सोदे में भ्रष्टाचार के कारण राजीव गांधी तथा कांग्रेस की प्रतिष्ठा कम हुई तथा चुनावों में जनता दल को सफलता मिली एवं वी०पी० सिंह को प्रधानमंत्री बनाया गया। लेकिन यह सरकार भी अपना समय पूरा करने से पहले ही टूट गई तथा श्री चन्द्रशेखर के नेतृत्व में नई सरकार का गठन किया गया। सन् 1991 में यह सरकार भी अल्पमत में आकर स्वमेव अपदस्थ हो गई।

1991–1996 के बीच विभिन्न राष्ट्रीय दलों में आन्तरिक गुटबन्दी इतनी बढ गयी कि उनमें से अनेक का विभाजन हो गया। कांग्रेस (इंदिरा) का एक गुट जो दल अध्यक्ष की नीतियों से असन्तुष्ट था, वह अर्जुन सिंह के नेतृत्व में अलग हो गया और एक नया दल इन्दिरा कांग्रेस (तिवारी) अस्तित्व में आया। इस दल के अध्यक्ष उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री श्री नारायण दत्त तिवारी को बनाया गया। तमिलनाडू में डी0ए0के0 के विभाजन के फलस्वरूप मूपनार के नेतृत्व में एक नया दल ''तमिला मनिला कांगेस'' अस्तित्व में आया। मध्य प्रदेश में माधवराज सिधिंया ने एक विशेष निर्वाचन क्षेत्र से लोकसभा का टिकट न पाने से रूष्ट होकर अलग दल ''मध्य प्रदेश विकास पार्टी'' का निर्माण किया। गुजरात में भाजपा की आन्तरिक लड़ाई जोरो पर थी और चुनाव के बाद शंकर सिंह बघोला ने एक नई पार्टी ''महा गुजरात पार्टी'' की स्थापना की। एक अन्य राष्ट्रीय दल जनता दल में 1994–95 के बीच दो बार विभाजन हुआ। राष्ट्रीय दलों से इस टूट–फूट का परिणाम यह हुआ कि अन्य राज्यों में क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का विकास हुआ।

सन् 1991 में चुनावों की घोषणा की मई 21 मई 1991 को चुनाव प्रचार के समय तमितलनाडू में पेरम्बटूर में एक बड़े बम विस्फोट में राजीव गांधी का निधन हुआ। सन् 1991 के चुनावों में कांग्रेस सबसे बडी पार्टी तो बनी लेकिन उसे पूर्ण बहुमत नहीं मिला श्री नरसिम्हा राव ने अन्य दलों के बहुमत से सरकार का गठन किया।

सन् 1996 के चुनावों में किसी भी दल को पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं हुआ लेकिन भारतीय जनता पार्टी लोकसभा में सबसे बडे दल के रूप में उभरी। श्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी ने सरकार का निर्माण किया। लेकिन यह सरकार 13 दिन ही

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

चल पायी तथा बहुमत सिद्ध करने से पहले ही वाजपेयी ने प्रधानमंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया। उसके बाद श्री एच० डी० देवगोड़ा के नेतृत्व में 13 दलों के संयुक्त मोर्चा ने सरकार का निर्माण जिसे कांग्रेस ने बाहर से समर्थन दिया। यह सरकार केवल 10 महीने चल सकी। कांग्रेस ने अपना समर्थन वापिस ले लिया तथा नेतृत्व परिवर्तन की मांग की अन्त में श्री आई०के० गुजराल को संयुक्त मोर्चा में प्रधानमंत्री पद की शपथ दिलायी गयी। यह सरकार भी लगभग 8 महीने चली और दिसम्बर 1997 में कांग्रेस ने सरकार से समर्थन वापिस ले लिया। श्री गुजराल ने प्रधानमंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया तथा राष्ट्रपति से लोकसभा भंग करने की सिफराशि की। राष्ट्रपति ने लोकसभा भंग करके नये चुनावों की घोषण की।

14वीं लोकसभा के लिए अप्रैल मई 2004 में चुनाव हुआ भाजपा द्वारा दिये गए फील गुड और इण्डिया शाइनिंग के नारों से जो चुनावी माहौल उत्पन्न हुआ उसमें एन0डी0ए0 सरकार की वापसी हुई। इस चुनाव में कांग्रेस पार्टी सबसे बड़े राजनीतिक दल के रूप में लोकसभा में आयी। 2004 चुनाव में 6 राष्ट्रीय दल 46 राज्य स्तरीय दलों ने भाग लिया। इसमें से 210 सीटें कांग्रेस के नेतृत्व वाले (यू०पी०ए०) गठबन्धन को तथा 187 सीटें भाजपा गंठबन्धन एन0डी0ए0 को तथा 180 सीटै वामपंथी दलों को प्राप्त हुई। कांग्रेस ने अन्य दलों का समर्थन लेकर एक नया संगठन संयुक्त प्रगतिशील गठबंन्धन अस्तित्व में आया जिसमें डॉ० मनमोहन के नेतृत्व में केन्द्रीय सरकार का गठन किया। यह पारस्परिक गतिरोध के बारे में अपने पांच वर्षों की अवधि पूरी करने में सफल रही।

यू०पी०ए० सरकार का पांच वर्ष का कार्यकाल पूरा होने पर मई 2009 में 15वीं लोकसभा के चुनावों में कांग्रेस ने 206 सीट जीत कर अच्छी सफलता प्रापत की। इसके नेतृत्व वाला यू0पी0ए0 गठबंधन 262 सीट जीतने में सफल रहा इस बार यह सरकार वाम दलों के बहारी समर्थ पर निर्भर नहीं थी। 15वीं लोकसभा के चुनाव में 364 राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और रजिस्टर्ड राजनैतिक दलों ने सामूहिक रूप से अथवा अलग–अलग चुनाव लडा।

सोलहवी लोकसभा में 2014 के चुनावों की बात करें तो कांग्रेस महज 44 सीटों पर जीत हासिल कर पाई थी और सदन को विपक्ष का नेता नहीं मिल पाया था।

इसी प्रकार सत्रहवी लोकसभा में 2019 के चुनावों की बात करें तो कांग्रेस महज पुनः 52 सीटों पर जीत हासिल कर पाई थी और उस बार भी सदन को विपक्ष का नेता नहीं मिल पाया था। मोदी राज में न सिर्फ विपक्षी पार्टियों बल्कि विपक्ष के नेता के अस्तित्व पर संकट गहरा गया है। अब सवाल उठता है कि ऐसे में भारतीय लोकतंत्र किस ओर जाएगा? इस सवाल के जवाब में वरिष्ठ पत्रकार नवीन जोशी कहते हैं कि हमारी संसदीय राजनीति में विपक्ष के नेता की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका संविधान के अनुसार लोकतंत्र को चलाने के लिए होती है।

निष्कर्ष–

लोकतन्त्र में दल बनाना हर नागरिक का अधिकार है और इस अधिकार पर किसी तरह का अंकुश लगना भी नहीं चाहिए। लेकिन दलों की बढती संख्या से लोकतंत्र को जो हानि हो सकती है उस पर विचार करना भी जरूरी है। आज आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय जनता को इस मुद्दे पर चिंतन के लिए गम्भीरता से आमंत्रित किया जाए कि देश में

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

कितनी विचारधारा वाले दल होने चाहिए? किसकी सोच व्यापक सकारात्मक और राष्ट्रवादी मुद्दों पर आधारित है, किस दल को इस देश का नेतृत्व सौंपा जाए ? इस विषय में केन्द्र सरकार चुनाव आयोग और महामहिम राष्ट्रपति को एक आम सहमति के लिए आवश्यक कदम उठाने की आवश्यकता है। इसके लिए जनता में जाग्रति लाना और राष्ट्रीय दलों की महत्ता पर विचार किया जाना आवश्यक है। अन्यथा जिस गति से देश में दिन प्रतिदिन राजनीतिक दलों का गठन होता जा रहा है वह दिन दूर नही जब देश में मतदाताओं की संस्था के बराबर राजनीतिक दल हो जाएगे जो लोकतन्त्र की स्वस्थ प्रणाली में प्रतिकूल प्रभाव डालेगे इसी प्रकार की बहुदलीय व्यवस्था लोकतन्त्र का भला नहीं कर सकती और हम इसे लोकतन्त्र का दुरूपयोग या लोकतान्त्रिक मजाक की संज्ञा दे तो किसी की आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- रामकुमार वर्मा नाटक रचनावली, भाग–2, सम्पादक–डॉ0 कमल किशोर गायेनका व डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, प्रकाशक–किताब घर, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, संस्करण–2010
- जयशंकर प्रसादऔर लक्ष्मी नारायण मिश्र के नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन– शशि शेखर नैथानी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, द्वितीय संस्करण–1980
- महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण–रामविलास शर्मा, प्र0सं0 1977, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
- समकालीन हिन्दी नाटक–काव्य चेतना, डॉ0 चन्द्रशेखर, सन् 1982, आत्माराम एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली।
- हिन्दी साहित्य–बीसवीं शताब्दी–नन्ददुलारे वाजपेयी– 1970 ई0 लोकभारती प्रकाशन, 159, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद।
- ओमप्रकाश सारस्वत–बदलते मूल्य और आधुनिक हिन्दी नाटक, रोहतक, मंथन प्रकाशन–1984
- आधुनिक हिन्दी नाटक एक यात्रा दशक– डॉ0 नरनारायण राय, भारतीय भाषा प्रकाशन, दिल्ली–1980
- राष्ट्रीय नवजागरण और प्रसाद के नाटक– डॉ0 इन्दुमती सिंह, साहित्य निलय कानपुर–208021, संस्करण–2001
- समकालीन हिन्दी नाटक–काव्य चेतना, डॉ0 चन्द्रशेखर, सन् 1982, आत्माराम एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली।
- भारतेन्दु हरिशचन्द्र, मदनगोपाल द्वि0 सं0–1985, राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली।
- हिन्दी साहित्य–बीसवीं शताब्दी–नन्ददुलारे वाजपेयी–1970ई0 लोकभारती प्रकाशन, 159, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद।
- हिन्दी उपन्यासों में नारी, डॉ0 शैल रस्तोगी, प्र0 सं0 –1977 विभु प्रकाशन, साहिबाबाद।
- मध्ययुगीन निर्गुण चेतना–इलाहाबाद–लोकभारती प्रकाशन, सन् 1972
- हिन्दी कहानी में नवीन मूल्य–गाजियाबाद अमित प्रकाशन–1970

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 09 September- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

- सारस्वत, ओमप्रकाश–बदलते मूल्य और आधुनिक हिन्दी नाटक–रोहतक, मंथन प्रकाशन–1984
- हरपाल सिंह–साहित्य और सामाजिक मूल्य, दिल्ली विभूति प्रकाशन–1985
- पातेरी, हेमेन्द्र कुमार–स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी उपन्यास, मूल्य संक्रमण, जयपुर, संधि प्रकाशन–1974
- जैन, निर्मला–आधुनिक साहित्य, मूल्य और मूल्यांकन, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन–1980
- गुंजन, गिरिराज शर्मा–हिन्दी नाटक–मूल्य संक्रमण, जयपुर, संधी प्रकाशन–1978
- ब्रजभूषण शर्मा–मानव और मानवावाद, दिल्ली, कला प्रकाशन–1978
- ओमप्रकाश सारस्वत–बदलते मूल्य और आधुनिक हिन्दी नाटक, रोहतक, मंथन प्रकाशन–1984
- साहित्यिक निबन्ध–डॉ0 विभुवन सिंह, हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, सन् 1985
- हिन्दी साहित्य का इतिहास–डॉ0 राजनाथ शर्मा, विनोद प्रकाशन मन्दिर, आगरा, सन् 1986
- शिवानी के उपन्यासों में समाज–डॉ0 सिद्धाम कृष्णा खोतरोली बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, कानपुर, प्र0सं0–2009